International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

व्याकरण शास्त्र में वर्णित वर्ण विचार

*डॉ. रविन्द्र कुमार गंगवार

Date of Submission: 20-01-2025 Date of Acceptance: 03-02-2025

मानव समाज में विचार-विनिमय का साधन भाषा ही है।भाषा शब्द 'भाष्' धातु से निष्पन्न हुआ है।[1]जिसका वास्तविक अर्थ व्यक्त वाणी के रूप में स्वीकार किया गया है अर्थात् जिसमें वर्णों का स्पष्ट उच्चारण हो,वह ही भाषा कहलाती है।[2]प्रायः ऐसा दृष्टिगोचर होता है कि जितना विस्तृत और सूक्ष्म अध्ययन संस्कृत भाषा में हुआ है,उतना अध्ययन विश्व की किसी भी भाषा में नहीं हुआ है।व्याकरण को वेदाङग पुरुष का मुख माना गया है।वैदिक काल से ही शब्द की मीमांसा की ओर भारतीय मनीषियों की बुद्धि प्रयत्नरत रही है।उच्चारण पर विचार-विमर्श हेतु वेदाङग में शिक्षा के प्रतिपादन के लिए प्रातिशाख्यों की रचना हुई।सर्वप्रथम यास्कमुनि ने अपने ग्रन्थ निरुक्त में शब्द का नाम,आख्यात,उपसर्ग और निपात के भेद से चतुर्विध विभाजन किया है।यास्क मुनि ने माना है कि समस्त शब्दों का आधार धातु समूह ही है।भाषा परिवर्तनशील होती है और इस परिवर्तनशीलता में कोई अंकुश यदि न रखा जाये तो भाषा का वर्चस्व खत्म होने का भय रहता है।भाषा की इस परिवर्तनशीलता पर नियन्त्रण रखने हेतु एवं संस्कार से युक्त बनाये रखने के लिए ही व्याकरण शास्त्र का जन्म हुआ।प्रायः यह स्वीकार किया गया है कि व्याकरण भाषा का निर्माण ही नहीं करता,बल्कि उसके साथ ही वह यह भी नहीं बतलाता है कि अमुक शब्द अमुक अर्थ में कब से और कैसे प्रयुक्त हुआ।व्याकरण तो भाषा के सिद्ध अर्थात् शिष्ट समाज में प्रचलित स्वरुप को ही बतलाता है।आचार्य पतञ्जलि ने यह माना है कि महर्षि पाणिनी ने शब्द अर्थ और इनके सम्बन्धों को स्वतः सिद्ध मानकर ही व्याकरण शास्त्र की रचना की है।[3]इसके साथ ही आचार्य भर्तृहरि ने भी व्याकरण का उद्देश्य और भाषा के व्यवहारिक प्रयोगों को ध्यान में रखते हुए शब्दों के साधुत्व और असाधुत्व का ज्ञान कराने वाला माना है।[4]व्याकरण के अध्ययन के उद्देश्य में ज्ञान की प्राप्ति प्रयोजन को बतलाते हुए आचार्य पतञ्जलि ने कहा है कि छहो अंगों सहित ब्राह्मण को निष्काम भाव से केवल ज्ञान की प्राप्ति करने के लिए प्रयत्न करना चाहिए।[5]साथ ही सन्देह निवारण के लिए,भाषा विषयक अज्ञान की निवृत्ति के लिए भी व्याकरण का अध्ययन आवश्यक है।[6]महाभाष्य में आचार्य पतञ्जलि ने लोक व्यवहार में शुद्ध भाषा के प्रयोग की आवश्यकता बतलाते हुए कहा है कि जो वाणी के प्रयोग का ज्ञाता (वैयाकरणिक) शब्दो का यथावत ज्ञान प्राप्त कर व्यवहार के समय (लिखने या बोलने) में कुशलतापूर्वक

*एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, गन्ना उत्पादक पी. जी. कॉलेज बहेड़ी, बरेली,मो. 9452812039

प्रयोग करता है,उसको इस लोक तथा परलोक में सफलता प्राप्त होती है।इसके विपरीत अपभ्रष्ट शब्दों का प्रयोग करने पर यह दोष का भागी होता है।[7]वैयाकरण आचार्य कैयट ने भी यह स्वीकार किया है कि शब्द और अर्थ का बहुत बड़ा महत्व होता है।यदि एक शब्द का भी ठीक तरह से ज्ञान हो जाय तो वह स्वर्ग में और इस लोक में भी समस्त कामनाओं को पूर्ण कराने वाला होता है।[8]

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

भारतवर्ष में व्याकरण का अध्ययन लगभग उतना ही प्राचीन है,जितना वेदों का अध्ययन प्रचीनतम माना जाता है।प्राचीन संस्कृत साहित्य के दस से भी अधिक व्याकरण सम्प्रदाय और सौ से अधिक वैयाकरणिक आचार्यो का परिचय संस्कृत के प्राचीन वाङमय में मिल जाता है।सम्पूर्ण वेदराशि को भारतीय जनमानस में प्राचीनतम् साहित्यिक ग्रन्थ के रूप में माना गया है।वेदों का अध्ययन करते समय एक-एक अक्षर का धार्मिक महत्व माना जाता है।वेदमन्त्र का भ्रष्ट स्वर और वर्ण से हीन उच्चारण महान् अनर्थ का कारण हो सकता है। बिना समझे स्वर का उच्चारण ठीक से न कर सकने के कारण ऋत्विजों के अपराध से यजमान अर्थात् वृत्तासुर मारा गया।[9]इसलिए वैदिकमन्त्रो के स्वरुप की रक्षा के लिए,उनके उच्चारण की शुद्धता का ज्ञान प्राप्त करने के लिए और उनके अर्थ को ठीक-ठीक परिज्ञान के लिए वैदिककाल से ही प्रयत्न प्रारम्भ हो गये थे।जिसके उद्देश्य से ही छह वेदागों (शिक्षा, कल्प,निरुक्त,व्याकरण,ज्योतिष और निरुक्त) के विकास के लिए वेदाङग पुरुष की उत्पत्ति हुई,[10] और वेदों के अध्ययन की पूर्णता के लिए इन वेदागों का अध्ययन अनिवार्य समझा जाने लगा।इन सभी वेदागों में व्याकरण को प्रमुख मानते हुये वेदपुरुष का मुख माना गया है।[11]व्याकरण का दूसरा नाम शब्दानुशासन भी है।वह शब्द सम्बन्धी अनुशासन भी करते हुए बतलाता है कि किसी भी शब्द का किस तरह प्रयोग करना चाहिए।प्रायः भाषा में शब्दों की अपनी प्रवृत्ति रहती है,व्याकरण के कहने से भाषा में शब्द नहीं चलते है,अपितु भाषा की प्रवृत्ति के अनुसार व्याकरण शब्द प्रयोग का दिशा-निर्देश करता है।व्याकरण के द्वारा भाषा पर शासन नहीं किया जाता है अपितु उसकी स्थिति प्रवृत्ति के अनुसार लोकशिक्षण करता है।शब्दानुशासन के प्रमाणभूत आचार्य पतञ्जलि मुनि ने व्याकरणाध्ययन के प्रयोजनों का वर्णन करतते हुए “चत्वारि श्रृंगा” [12] "चत्वारि वाक",[13] “उत त्व",[14] “सक्तुमिव",[15] “सुदेवोऽसि"[16] आदि मन्त्र वर्णित किए हैं और उनकी व्याख्या व्याकरणशास्त्रपरक की है।[17]आचार्य पतञ्जलि से पूर्व यास्क मुनि ने भी “चत्वारि वाक्” [18]मन्त्र की व्याख्या व्याकरणशास्त्र के अनुसार लिखी है।[19]व्याकरण पद जिस धातु से सम्पन्न होता है,उसका मूल अर्थ में प्रयोग यजुर्वेद में उपलब्ध होता है।[20]

संस्कृत वाङमय के इतिहास में सभी विद्याओं के आदि प्रवक्ता के रूप परमपिता ब्रह्मा को माना गया है।यह भी परम सत्य है कि व्याकरण शास्त्र के आदि प्रवक्ता के रुप में परमपिता ब्रह्मा को स्वीकार किया जा सकता है।ऋक्तन्त्रकार में उल्लिखित किया गया है कि व्याकरण के एकादेश अक्षरसमाम्नाय के सर्वप्रथम प्रवक्ता के रूप में परमपिता ब्रह्मा जी को ही माना गया है।इस तरह प्राचीन भारतीय ऐतिहासिकों का सुनिश्चित मत है कि लोक में जितनी भी विद्याओं का प्रकाश हुआ है,उन सभी विधाओं का प्रवचन ब्रह्मा जी ने किया है।यह प्रवचन अत्यन्त विस्तृत था।यह आदि प्रवचन ही शास्त्र या अनुशासन नाम से प्रसिद्ध हुआ।उत्तरवर्ती समस्त प्रवचन ब्रह्मा आदि के प्रवचन के अनुसार हुए,जिन्हें अनुशास्त्र,अनुतन्त्र अथवा अनुशासन कहा जाता है।तदुपरान्त व्याकरणशास्त्र के दूसरे प्रवक्ता के रूप में आचार्य बृहस्पति को माना गया है।महर्षि अङ्गिरा के पुत्र होने के कारण इन्हें अङ्गिरस नाम से भी जाना जाता है।ब्राह्मण ग्रन्थों में इन्हें देवों का पुरोहित माना गया है।[21] कोशग्रन्थों में इन्हें सुराचार्य अर्थात् देवताओं के आचार्य के रुप में वर्णित किया गया है।परन्तु पुराणों में इन्हें वाक्पति नाम से अभिहित किया गया है।[22]देवगुरु वृहस्पति के द्वारा अनेक शास्त्रों का प्रवचन किया गया था,उन ग्रन्थों में सामगान,[23]अर्थशास्त्र,[24]इतिहास-पुराण,[25] वेदांग,[26]ज्योतिष,[27]वास्तुशास्त्र,[28]अंगदतंत्र[29] और व्याकरणशास्त्र प्रमुख थे।परन्तु कालान्तर में वेदांगों के साथ व्याकरण का उल्लेख अनेक ग्रन्थों में प्राप्त होता है।महर्षि पतञ्जलि ने अपने ग्रन्थ महाभाष्य में इस तथ्य का उल्लेख किया है कि देवगुरु बृहस्पति

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

ने देवराज इन्द्र को दिव्य सौर अर्थात् सहस्र वर्ष तक प्रतिपद व्याकरण शास्त्र का उपदेश दिया था।[30]व्याकरण शास्त्र का उपदेश देते समय देवगुरु बृहस्पति ने इन्द्र के लिए प्रतिपदपाठ द्वारा शब्दोपदेश किया था।[31]उस समय तक लक्षणों का निर्माण नहीं हुआ था।प्रथमतः इन्द्र ने शब्दोपदेश की प्रतिपदपाठ रूपी प्रक्रिया की दुरुहता को समझा।इस प्रकार इन्द्र के द्वारा प्रकृति-प्रत्यय आदि द्वारा शब्दोपदेश प्रक्रिया की कल्पना की गयी।[32]आचार्य सायण ने भी इसकी व्याख्या करते हुए लिखा है कि वाणी प्राचीन अर्थात् पुराकाल में अव्याकृत बोली जाती थी इस तरह से यह माना जा सकता है कि व्याकरण सम्बन्धी प्रकृति-प्रत्ययादि संस्कार से रहित अखण्ड पदरुप वाली थी।तब देवों ने अपने राजा इन्द्र से कहा कि इस वाणी को व्याकृत अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय आदि संस्कार से युक्त करो।तब इन्द्र के द्वारा उस वाणी को मध्य से तोड़कर व्याकृत अर्थात् प्रकृति-प्रत्यय आदि से युक्त कर दिया।[33]

वर्ण का स्वरुप - मुख से निकलने वाली ध्वनि को वर्ण कहा जाता है।मुख्यरूप से वर्ण उस मूल ध्वनि को कहा जाता है जिसके लिए टुकड़ों या खण्डों में विभक्त नहीं किया जा सकता है। जैसे-अ,इ,क,थ,द,म और ग इत्यादि।मूलरूपेण ध्वनियों द्वारा राम शब्द को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि इसमें चार ध्वनियां मूलरुप में है,जिनके खण्ड नहीं किये जा सकते है।जैसे-र्+आ+म्+अ।महर्षि पाणिनि ने संस्कृत भाषा के स्वरूप को परिष्कृत अर्थात् संस्कारित एवं नियमित करने के उद्देश्य से भाषा के विभिन्न अवयवों एवं घटकों को अपने व्याकरणिक ग्रन्थ अष्टाध्यायी में उल्लिखित किया है।यथा-ध्वनि विभाग के रूप अर्थात् अक्षरसमाम्नाय नाम अर्थात् संज्ञा सर्वनाम,विशेषण,पद अर्थात् विभक्तियुक्त वाक्य में प्रयुक्त शब्द, आख्यात् अर्थात क्रिया,उपसर्ग,अव्यय,वाक्य,लिंग इत्यादि के साथ-साथ उनके अर्न्तसम्बन्धों का समावेश किया गया है।अष्टाध्यायी आठ अध्यायों में और बत्तीस पादो में विभक्त है,जो समानरूप से विभाजित है।व्याकरण के इस महतीय ग्रन्थ में विभक्ति प्रधान संस्कृत भाषा के विशाल कलेवर अर्थात् शरीर का समग्र एवं सम्पूर्ण विवेचन लगभग 4000 सूत्रों में किया गया है।अष्टाध्यायी में प्रयुक्त सूत्रों की उत्पत्ति में माहेश्वर सूत्रों का महत्वपूर्ण स्थान है।इन माहेश्वर सूत्रों की उत्पत्ति भगवान नटराज अर्थात् शंकर के ताण्डव नृत्य से मानी गयी है।यथा-नृत्य अर्थात् ताण्डव के अवसान अर्थात् समाप्ति पर नटराज शिव ने सनकादि ऋषियों की सिद्धि और कामना की उद्धारपूर्ति के लिए नवपञ्च अर्थात् चौदह बार डमरु बजाया। इस प्रकार चौदह शिवसूत्रों की यह जालरूपी वर्णमाला प्रकट हुई।डमरु के चौदह बार बजाने से चौदह सूत्रों के रूप में ध्वनियाँ निकली,इन्ही ध्वनियों से संस्कृत व्याकरण का प्राकट्य हुआ।[34] साथ ही महर्षि पाणिनि ने अपने शिक्षा ग्रन्थ पाणिनीय शिक्षा में स्वर अर्थात् वर्ण की उत्पत्ति में मानव शरीर में विभिन्न अवयव किस-किस तरह कार्य करते हैं,इसका प्रयोग करते हुए उन्होंने माना है कि जीवात्मा द्वारा प्रेरित वायु फुफ्फुस जब उच्छावास की अवस्था में संकुचित होता है,तब उच्छासित वायु,वायुनलिका से होती हुई स्वरयन्त्र तक पहुँचती है।जहाँ उसके प्रभाव से स्वरयन्त्र में स्थिर स्वररज्जुएँ कम्पित होने लगती है।जिसके फलस्वरुप स्वर अर्थात् वर्ण की उत्पत्ति होती है।ठीक इसी समय अनुनादक अर्थात् स्वयन्त्र का ऊपरी भाग,ग्रसनी,मुख तथा नासिका में अपनी-अपनी क्रियाओं द्वारा स्वर में विशेषता और मृदुता उत्पन्न करते हैं।इसके उपरान्त स्वर अर्थात् वर्ण उच्चारण के रुपान्तरण उच्चारक अर्थात् कोमल,कठोर,तालु,जिहवा,दन्त तथा ओष्ठ आदि करते है।इन्हीं सबके सहयोग से स्पष्ट शुद्ध स्वरों अर्थात् वर्णों की उत्पत्ति मानी गयी है।[35]व्याकरण के दृष्टिकोण से प्रमुख व्याकरणशास्त्रियों ने वर्णविचार के विभिन्न सोपान वर्णित किए है-

(क)–संस्कारित,परिमार्जित,शुद्ध-सम्प्रति

आदि शब्दों के द्वारा आर्यो की जिस भाषा का ज्ञान प्राप्त हो वह भाषा संस्कृत भाषा कहलाती है।इस

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

भाषा के लिए प्राचीन समय में पण्डितों द्वारा बातचीत में प्रयोग किया जाता था और इसी के द्वारा काफी लम्बे समय तक आर्य विद्वानों का परस्पर वाग्व्यवहार होता था।मुख्यरूपेण जनसाधारण की भाषा का नाम प्राकृत था।आर्य लोगों का मानना था कि किसी वस्तु के टुकड़े-टुकड़े करके उसका ठीक अर्थात् वास्तविक स्वरुप दृष्टिगोचार कराना ही व्याकरण है।यह शब्द भाषा के सम्बन्ध में ही अधिक प्रयोग में आता है,यदि देखा जाये तो वाक्यों का समूह ही भाषा कहलाती है,यह वाक्य छोटे और बड़े दोनों तरह के हो सकते है।प्रायः वाक्य को ही भाषा के आधार रूप में स्वीकार किया गया है,वाक्य में शब्दों का समूह रहता है और प्रत्येक शब्द में कई वर्ण होते है,जिनके लिए प्रायः अक्षर भी कहा जाता है।जिसका कभी नाश न हो,ऐसे अविनाशी शब्द को अक्षर कहा जाता है।अक्षर के लिए वर्ण इस हेतु से भी कहा जाता है क्योंकि प्रत्येक वर्ण का नाद अविनश्वर है।यदि हम किसी शब्द का उच्चारण करें तो उसके अक्षर उच्चारण काल में नाद कहलायेगें और उस दशा में शब्द नादों का समूह माना जायेगा और इस नादसमूह को शब्द भी इसीलिए कहते है क्योंकि नाद शब्द और ध्वनि का अर्थ प्राय एक ही है।इस सृष्टि में नादों का भण्डार अनन्त है,प्रत्येक भाषा एक परिमित संख्या में ही नादों का प्रयोग करती है।[36]उदाहरणार्थ-चीनी भाषाओं में ऐसे बहुत से शब्द है जो कि संस्कृत भाषा में नहीं है और संस्कृत भाषा में ऐसे कई नाद है जो फारसी और अंग्रेजी भाषा में नहीं है।यथा-माता शब्द को संस्कृत में मातृ,लैटिन में मातर(Matar),प्राचीन यूनानी में मैतेर(Meter),आधुनिक जर्मन में मुटर(Mutter),अंग्रेजी में मदर(Mother) और आदिम हिन्द यूरोपीय में मातेर(Mater) तथा देवता को संस्कृत में देव,लैटिन में देउस(Deus),आधुनिक जर्मन में जिउ(Ziu) तथा आदिम हिन्द यूरोपीय में देइवोस (deiwos) कहा जाता है।[37]

(ख)- संस्कृत भाषा में जिन अक्षरो या वर्णों का प्रयोग होता है। वह निम्न लिखित है जिनके लिए अधोलिखित चार्ट या ग्राफ द्वारा दर्शाने का प्रयत्न किया गया है-

वर्ण(Letter)

वर्णों का वर्गीकरण
(Classification of Letters)

स्वर वर्ण (अच् वर्ण)Vovels			व्यंजन वर्ण (हल वर्ण)Consoants		
ह्रस्व स्वर (Short Vivol)	दीर्घ स्वर (Long Vovel)	प्लुत स्वर (Protracted Vovel)	स्पर्श वर्ण (Short Cons.)	अन्तस्थ वर्ण (Long Cons.)	उष्म वर्ण (Protracted Cons.)
वर्ण का नाम			वर्ण संख्या		
1-ह्रस्व स्वर- अ इ उ ऋ लृ			05		
2-दीर्घ स्वर- आ ई ऊ ॠ ए ऐ ओ औ			08		
3-प्लुत स्वर- वैदिक भाषा में प्रयोग			13		
4-स्पर्श वर्ण क ख ग घ ङ			5×5 = 25		
च छ ज झ ञ					
ट ठ ड ढ ण					
त थ द ध न					
		प फ ब भ म			
5-अन्तस्थ वर्ण- य व र ल				04 (व्यंजनवर्ण)	
6-उष्म वर्ण- श ष स ह					04 (25+08=33)

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

7-संयुक्त वर्ण - क्ष (क+ष) 04 वर्ण
त्र (त+र)
ज्ञ (ज+ञ)
श्र (श+र)
8-तीन ध्वनियाँ- अनुस्वार (अं)
विसर्ग (:)
अनुनासिक (ँ) चन्द्र बिन्दु
9-नई ध्वनि - ऑ (ॅ)

महर्षि पाणिनी ने इन्हीं अक्षरों को चौदह माहेश्वर सूत्रों में इस क्रम में पिरोने का प्रयास किया है-

अइउण्-1,ऋलृक्-2,एओङ्-3,ऐऔच्-4हयवरट्-5,लण्:6.ञमङनम्-7,झभञ्-8,घढ़दष्-9,जबगडदश्-10,खफछठथचटतव्-11,कपय्-12 शषसर्-13,हल्-14

यह चौदह सूत्र माहेश्वर सूत्र कहे जाते है क्योंकि ऐसी मान्यता है कि यह सूत्र महर्षि पाणिनी को भगवान महेश्वर की कृपा से प्राप्त हुये थे।इन्हें प्रत्याहार सूत्र भी कहते है,क्योंकि इनके द्वारा सरलता और सूक्ष्म रीति से अक्षरों का बोध हो जाता है।हल अक्षरों को इत् नाम से भी जाना जाता है।[38] जैसे- ण् तथा क् इत्यादि।इन्ही विभिन्न अक्षरों द्वारा प्रत्याहार बनाये जाते है।पूर्व के किसी सूत्र का कोई वर्ण लेकर उसको यदि आगे की किसी इत् के पूर्व जोड़ देने पर वह प्रत्याहार बन जाता है और यह उस पूर्व वर्ण का तथा इत् के बीच के सभी वर्गों का (मध्य में आने वाले इत् वर्णों को छोड़कर) बोधक होता है।यथा- अक् प्रत्याहार में अइऋलृ तथा शल् प्रत्याहार में शषस तथा ह वर्णों का उल्लेख माना जाता है।[39] यद्यपि महर्षि पाणिनि ने प्रत्याहारों कि संख्या बियालिस या तैतालिस मानी हैं।जिस वर्ण का स्वतन्त्र रूप से उच्चारण किया जा सके अर्थात् किसी दूसरे वर्ण कि अपेक्षा न हो तो वह वर्ण स्वर कहलाता है।साथ ही जिस वर्ण का बिना किसी दूसरे वर्ण अर्थात् स्वर के बिना उच्चारण न किया जा सके;तो वह वर्ण व्यञ्जन कहलाते हैं।जिस प्रकार क वर्ण में "क्" में "अ" वर्ण रूपी स्वर मिला हुआ है,क्योंकि इसका शुद्ध रूप "क" है।माहेश्वर सूत्रों के अनुसार स्वरों को अच् तथा व्यञ्जन वर्णों को हल् भी कहा गया है।इस हल् वर्णों को अर्थात् स्वर विहीन शुद्ध रूप को प्रकट करने के लिए इनके नीचे तिरक्षी रेखा (्) लगा देते है, जिन्हें हल् चिन्ह भी कहते है। उदितो के पंचम वर्ण अर्थात् ङ् ञ् ण् न् म् को भी अनुनासिक कहते हैं,क्योंकि इनका उच्चारण मुख और नासिका दोनों से होता है।[40]इसी तरह हस्व दीर्घ और प्लुत के भेद से स्वरों के तीन भेद माने गये हैं।[41]प्रायः यह माना गया है कि स्वर के उच्चारण में यदि एक मात्रा का समय लगे तो वह ह्रस्व अर्थात "अ" यदि दो मात्रा का समय लगे तो दीर्घ अर्थात् "आ" और यदि तीन मात्रा का समय लगे तो वह स्वर प्लुत् अर्थात् आ3 कहलाता है।[42] उच्चारण के अनुसार ही उदात्त,अनुदात्त और स्वरित के भेद से स्वरों के तीन भेद किये गये है जो कि वैदिक स्वरों में पाये जाते है।।[43]प्रायः सभी स्वर अनुनासिक और अननुनासिक भेद से दो प्रकार के माने गये है।अनुनासिक स्वरो में उच्चारण के समय नासिका से सहायता ली जाती है,जैसे- अं,आं,एं,ऐं आदि स्वर।इसके अतिरिक्त अननुसिक वर्ण कहे जाते है जैसे- अ,आ,ए,,ऐ आदि।इसी तरह व्यञ्जन वर्णों के भी कई भेद है,यथा क से म तक व्यञ्जन स्पर्शसंज्ञक कहलाते हैं,इनमें कवर्ग आदि पाँच वर्ग है।य र ल व वर्णों को अन्तस्थ माना गया जो कि स्वर और व्यञ्जन वर्णों के बीच के है।श,स,ष,ह वर्ण उष्मसंज्ञक कहे गये है अर्थात् इनका उच्चारण करने के लिए अन्दर से अधिक ताकत से श्वास लानी पड़ती है।[43]विसर्ग के लिए

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

वस्तुतः एक छोटा ह्र माना जाता है क्योंकि वह सदैव किसी स्वर के अन्त में ही आता है।इसके लिए स और र का रुपान्तर मात्र माना गया है,किन्तु उच्चारण की विशेषता के कारण इसका अलग व्यक्तित्व है।प्रायः ऐसा होता है कि यह जिस स्वर के पश्चात् जुड़ा होगा तो उसी के उच्चारण स्थान से उच्चरित होगा।क और ख के पूर्व कभी-कभी एक अर्ध विसर्ग सा उच्चारण के प्रयोग में आता है उसे इस चिन्ह ( ) द्वारा व्यक्त किया जाता है,तब उसे जिद्वामूलीय कहते है।ठीक उसी प्रकार प और फ के पूर्व वाले विसर्गनाद को उपध्मानीय कहा जाता है,उसको भी इसी चिन्ह द्वारा दर्शाया जाता है।प्राय यह भी देखा गया है कि अनुस्वार यदि पञ्चवर्गीय अक्षरो के पूर्व आये तो उसका उच्चारण उस वर्ग के पञ्चम अक्षर अर्थात् अनुनासिक वर्ण सा होता है।इसके अतिरिक्त कही दूसरे स्थान पर आता है,तो उसका उच्चारण केवल नासिका से ही होता है।व्यजनों के एक भेद के रूप में अल्पप्राण और महाप्राण को भी स्वीकार किया जाता है।जिनके उच्चारण में कम श्वास बल की आवश्कता होती है,उन्हें अल्पप्राण और जिनके उच्चारण अधिक श्वास बल की आवश्यकता पड़े उन्हें महाप्राण कहा जाता है।[44]

(ग) वर्ण विचार के अन्तर्गत उच्चारण में मुख्यरुपेण यह माना जाता है कि वर्ण का उच्चारण मुख के किस भाग से किया जाता है।अन्दर से आती हुई श्वास-वायु को स्वछन्दता से न निकालकर उसको मुख के विभिन्न अवयवों से तथा नासिका से विकृत करके निकालना ही वर्णों का उच्चारण माना गया है।इस विकार के उत्पन्न करने से नासिका तथा मुख के भाग प्रयोग में आते है।इस विकार के कारण ही नादों में भेद पड़ जाता है।पाणिनिकृत व्याकरणिक ग्रन्थ अध्याध्यायी में यह उल्लेख प्राप्त होता है कि जिन-जिन अवयवों से विकार उत्पन्न किया जाता है,उनको नादों का स्थान माना गया है।आचार्य पाणिनि ने वर्णों के स्थानों के रूप में मुख में स्थित विभिन्न स्थानों का वर्णन किया है।जो कि अधोलिखित है-

(i) कण्ठ - अ,आ,विसर्ग तथा कवर्ग
(ii) तालु - इ,ई,य तथा चवर्ग
(iii) मूर्धा - ऋ,र तथा टवर्ग
(iv) दन्त - लृ,ल तथा तवर्ग
(v) ओष्ठ - उ,ऊ,उपध्यानीय तथा पवर्ग
(vi) नासिका - ञ,म,ङ,ण तथा न
(vii) कण्ठतालु - ए तथा ऐ
(viii) कण्ठोष्ठ - ओ तथा औ
(ix) दन्तोष्ठ - व
(x) जिह्वामूलीय - जिहवाकी जड़ ( )
(xi) नासिका - अनुस्वार (ं)

वर्ण के इन उच्चारण स्थानों के सहयोग के लिए प्रयत्न की भी आवश्यकता होती है।प्रयत्न के आभ्यन्तर तथा वाह्य के भेद से दो भाग होते हैं,जो कि एक वर्ण के स्फुट होने के पूर्व तथा दूसरा उच्चारण क्रिया के पश्चात् माना जाता है।आभ्यन्तर-प्रयत्न स्पृष्ट,ईषत्-स्पृष्ट, विवृत, ईषत्-विवृत और संवृत के भेद से पाँच प्रकार का होता है।इसमें स्पर्श संज्ञक वर्णों का प्रयत्न स्पृष्ट, अन्तस्थों का ईषत्-स्पृष्ट, ऊष्मसंज्ञक वर्णों का ईषत्-विवृत, स्वरो का संवृत तथा केवल हस्व अ का आभ्यन्तर प्रयत्न संवृत होता है,किन्तु जब यह प्रयोग की अवस्था में आता है,तो इसका आभ्यन्तर प्रयत्न भी विवृत होता है।वाहय-प्रयत्न भी विचार,श्वास,अघोष,संवार,नाद,घोष,अल्पप्राण,महाप्राण, उदात्त,अनुदात्त और स्वरित के भेद से ग्यारह प्रकार का होता है।इनमें प्रत्येक वर्ग के प्रथम द्वितीय वर्ण तथा श,ष,स् का वाहय प्रयत्न विवार,श्वास और अघोष है।प्रत्येक वर्ग का तीसरा, चौथा और पाँचवाँ तथा (यण) य र ल व का वाहय प्रयत्न संवार,नाद और घोष होता है।वर्गो के प्रथम, तृतीय और पंचम वर्ण तथा अन्तस्थ का वाहय प्रयत्न अल्पप्राण को माना गया है।इसके साथ ही प्रत्येक वर्ग के द्वितीय, चतुर्थ तथा (उष्मसंज्ञक) श ष स ह का वाहय प्रयत्न महाप्राण को माना गया

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

है।उदात्त अनुदात्त और स्वरित प्रयत्न केवल स्वरों का होता है।साथ ही एक स्थान उच्चरित होने वाले तथा एक ही आभ्यन्तर प्रयत्न वाले वर्ण सवर्ण कहलाते है।भिन्न स्थानों से उच्चारण किए हुए वर्ण परस्पर असवर्ण कहलाते हैं।यथा ऋ तथा ऌ में उच्चारण स्थान का भेद रहने पर भी परस्पर सवर्णता पायी जाती है।[47]

1- भाष् व्यक्तायां वाचि।

2- व्यक्ता वाचि वर्णा येषा त इमे व्यक्तवाच:।

3- कथं पुनरिदं भगवत: पाणिनेराचार्यस्य लक्षणं प्रवृत्तम, सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धे महाभाष्य। व्याकरण महाभाष्य-1/3/48

4- साधुत्व ज्ञानविषया सैषा व्याकरण स्मृति:। वाक्यपदीय-1/143

5- ब्राह्मणेन् निष्कारणो धर्मा: षडंगो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च। महाभाष्य

6- असन्देहार्थम् चाध्येयं व्याकरणम्। महाभाष्य

7- महाभाष्य- गौण प्रयोजन

8- एक: शब्द: सम्यग्ज्ञात: सुष्ठु प्रयुक्त: स्वर्गे लोके च काम्धुग भवति। महाभाष्य प्रदीप

9- मन्त्रहीन: स्वरतो वर्णतो वा, मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।

स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति, यथेन्द्रशत्रु: स्वरतोऽपराधात।। पाणिनीय शिक्षा श्लोक-52

10-शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं छन्दं-ज्योतिषम्। वेदांग साहित्य

11-मुखं व्याकरणं स्मृतं। पाणिनीय शिक्षा

12-ऋग्वेद-4/58/3

13-ऋग्वेद-1/164/45

14-ऋग्वेद-10/71/4

15-ऋग्वेद-10/71/2

16-ऋग्वेद-8/69/12

17-महाभाष्य अध्याय-1,पा.-1,आ.-1

18-ऋग्वेद-1/164/45

19-नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्चेति वैयाकरणा:। निरुक्त-13/2

20-दृष्टवारूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापति:। यजुर्वेद-19/77

21-वृहस्पतिर्वै: देवानां पुरोहित। ऐतरेय ब्राह्मण-8/26

22-भार्योमेयवाक्पतस्त्वं। म. पु.-23/4

23-छान्दोग्योपनिषद्-2/22/1

24-अध्यायानां सहस्रैस्तु त्रिभिरैव वृहस्पति। शान्तिपर्व-59/84

25-वायुपुराण-103/59

26-वेदांगानां वृहस्पति। शान्तिपर्व, अध्याय-112, श्लोक-32

27-चेद वृहस्पतिमतप्रमाणं वृहस्पति। प्रबन्ध चिन्तामणि, पृष्ठ-109

28-वृहस्पति देवताओं के पुरोहित थे। महाभारत,, शान्तिपर्व-75/6

29-तथा शुक्र वृहस्पति अणदेशेन् विख्याता वास्तुशास्त्र उपदेश-3-4

30-वृहस्पतिरिन्द्राण दिव्यं वर्षसहस्रैम् प्रतिपदोषाया शब्दानां शब्दापरायणं प्रोवाच-1/1/1

31-दिव्य वर्ष सहस्रैमिन्द्रा वृहस्पते एकाशात प्रतिपादेन् शब्दान् पठ्न्नान्तं जगामेति।

प्रक्रिया कौमुदी, भाग-1,पृष्ठ-7

32-वाग्वै परावाच्य कृतावदत। ते देवा इन्द्रामब्रुवन, इमां नो वाचं व्याकुर्वन्ति,-- तामिन्द्रो

मध्यतोऽवक्रम्य व्याकरोत। तैत्तिरिय संहिता-6/4/7

33-तामखण्डा वाचमध्ये विच्छिद्य: प्रकृति प्रत्यय विभागं सर्वत्राकरोत्। सायण-ऋग्भाष्य

उपोद्वात पूना संस्करण, भाष्य-1 पृष्ठ-26

34-नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद धक्कां नवपञ्चवारम।

उद्धर्तुकाम: सनकादिसिद्धान एतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम।।

35-आत्मा बुद्धा समेत्यार्थान्मनोयुङके विवक्षया।

मन: कायाग्निमाहन्ति स: प्रेरयति मारुत:।।

International Journal of Humanities Social Science and Management (IJHSSM)
Volume 5, Issue 1, Jan.-Feb., 2025, pp: 425-432 ISSN: 3048-6874
www.ijhssm.org

36- तुल्यास्यप्रत्यनं सवर्णम -1/1/9

37-भाषाविज्ञान- हिन्द यूरोपीय भाषापरिवार।

38-कुछुतुटुपु उदित कहलाते हैं, तथा अपने अपने वर्ग के वाचक होते हैं। जैसे- क से क वर्ग, च से चवर्ग, त से तवर्ग, ट से टवर्ग और प से पवर्ग आदि।

39-आदिरन्त्येन संहिता-1/1/71

40-एकमात्रा भवेदह्रस्वी, द्विमात्रं दीर्घमुच्यते। त्रिमात्रस्तु प्लुतं ज्ञेयो, व्यंजनं च अर्धमात्रकम।। पाणिनीय शिक्षा

41-उच्चैरुदात्त:-1/2/29 , नीचेरुदात्त:-1/2/30, समाहार: स्वरित-1/2/31 अर्थात् उच्चारण स्थान के उच्च भाग से उदात्त, निम्न भाग से अनुदात्त तथा दोनों से मिश्रित स्वारित कहलाता है।

42-काद्योमावसाना स्पर्श:,यरलव अन्तस्थ:,शषसह ऊष्माण: ।

43-वर्णानां प्रथम तृतीय पंचमा यणश्चाल्प्राणा। वर्णानां द्वितीय चतुर्थोश्लश्च महाप्राणा।। पाणिनीय शिक्षा

44-अकुहविसर्जनीयानां कण्ठ:---------- । ---------- नासिका अनुस्वारस्य।।

45- संस्कृत व्याकरण में गणितीय पद्धति, पृष्ठ-6

46-ताल्वादिस्थानमाभ्यान्तरप्रयत्नश्चेत्येतद्वय यस्य येन तुल्य तन्मिथ सवर्णसंज्ञस्य।

47-संस्कृत व्याकरण में गणितीय पद्धति, पृष्ठ-6